International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नाट्य एवं नाट्यशास्त्र की उपयोगिता

डॉ. धर्मेन्द्र कुमार सिंहदेव
सहायकाचार्य,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, मानित विश्वविद्यालय,
भोपाल परिसर, बागसेवनिया, भोपाल-43 (म.प्र.)

शोधपत्रसार

काव्येषु नाटकं रम्यम्, भावानुकीर्तनं नाट्यम् –नाट्य की महिमा विश्वपटल में सर्वविदित है। नाट्यशास्त्र को समग्र भारतीय-कलाओं का कोश कहा जाता है। नाट्यशास्त्र भारतीय शास्त्रपरम्परा का एक परिनिष्ठित अनुमप ग्रन्थरत्न है। नाट्योत्पत्ति नामक नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय के आधार पर ही नाट्यशास्त्र का कलेवर प्रतिष्ठित है। नाट्यशास्त्र के उपलब्ध संस्करणों में अध्याय की संख्या 36 या 37 है। नाट्यशास्त्र ग्रन्थ छन्दोबद्ध है, छन्द प्रायः अनुष्टुप् है। कतिपय स्थल गद्यमय भी है। भारतीय परम्परा में भरत मुनि ही नाट्यशास्त्र के रचनाकार माने जाते हैं। सामान्यतः नाट्यशास्त्र का रचनाकाल ई.पू. द्वितीय शताब्दी मानना अधिक न्यायसंगत है। नाट्यशास्त्र गद्य और पद्य दोनों प्रकार की शैलियों में लिखा गया है। नाट्यशास्त्र में सूत्र, भाष्य एवं निरुक्ति- तीन शैलियों के गद्य मिलते हैं। नाट्यशास्त्र एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें दृश्य एवं श्रव्य उभयविध काव्य का सर्वांगीण विवेचन हुआ है। उनके रस, अलंकार, गुण, रीति एवं अभिनय आदि तत्त्वों का निरूपण एवं उनकी व्याख्या नाट्यशास्त्र में उपलब्ध है। नाट्यशास्त्र नाट्यकार, अभिनेता तथा सामाजिक इन सभी के लिए उपयोगी विषयों का वर्णन करता है। नाट्यशास्त्र में उसके पूर्व बिखरे हुए नाट्य-सिद्धान्तों आदि के सर्वथा योजन करने का तो सफल प्रयास किया ही गया है, साथ ही उसमें समाज की दृष्टि से हीन समझने जाने वाले नटों तथा अभिनेताओं आदि को प्रतिष्ठित स्थान दिलाने का भी प्रयास किया गया है। सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र के 36/37 अध्यायों में नाट्य की उत्पत्ति, लक्षण, प्रेक्षागृह, नृत्य के विविध अंग, चतुर्विध अभिनय, रस, भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भावादि, नायक-नायिकाओं के भेदोपभेद, संगीत, वाद्य, छन्दः, गुण, रीति, अलंकार आदि विषयों का विशेष विवेचन हुआ है। नाट्यवेद किस प्रकार उत्पन्न हुआ ? किस के लिए उत्पन्न हुआ ? उसके कितने अङ्ग है ? उसका क्या प्रमाण है ? और उसका प्रयोग किस प्रकार होता है ? इस प्रश्न-पञ्चक के अनुरूप ग्रन्थ के स्वरूप का अनुमान किया जा सकता है। इसके उत्तर में ही इस नाट्यशास्त्र का प्रवचन हुआ है। ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस ग्रहण कर नाट्य नामक पंचम वेद की रचना की। लोक का सुखदुःखात्मक स्वभाव जब चतुर्विध अभिनयों द्वारा अभिनीत किया जाता है, तो उसे नाट्य कहते हैं। भाव, अवस्था एवं लोक व्यवहार से युक्त नाट्य का स्वरूप भी होता है।शोक सन्तप्त के लिये ध्यैर्य, रोगपीडितों के लिये मनोविनोद, श्रम से थके हुये के लिये सुख प्रदान करने वाला यह नाट्य होता है।वर्तमान काल में दुःखार्तादि के लिये ,

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नाट्य विश्रान्तिजनक होगा, एवं कालान्तर में जिससे सुख प्राप्त हो सके- इस प्रकार का उपदेश करता है। दुःख का नाश, सुख का वितरण और कालान्तर में सुख की प्राप्ति नाट्य के प्रयोजन हैं। नाट्य को विभिन्न प्रकार के लोगों के लिए विभिन्न प्रकार से मनोरञ्जन, शिक्षण तथा आनन्द प्रदान करने वाला कहा गया है। नाट्य चरित्रोत्थान का एक अमोघ साधन है।नाट्य तथा जीवन में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। दर्शक अपने जीवन को उदात्त बनाने के लिए हितोक्ति को स्वीकार करता है। संकेत देता है कि- कवि सुन्दर-मंगल को ही अपनी वाणी में प्रश्रय देता है। वह सत्य की अपेक्षा हित का प्रतिनिधि होता है।

1. प्रस्तावना

काव्येषु नाटकं रम्यम् [1]–यह सुभाषित काव्य-जगत् में सर्वथा चरितार्थ होता है। नाट्य की महिमा बताते हुए कविकलुगुरु महाकवि कालिदास कहते हैं कि,

देवानामिदमामनन्ति मुनयः शान्तं क्रतुं चाक्षुषं
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्तं द्विधा।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधकम् ।। [2]

अर्थात् नाट्यशास्त्र के प्रवर्तक भरतादि मुनि लोगों का कहना है कि नाट्य देवताओं की आंखों को सुहाने वाला यज्ञ है। स्वयं महादेव शंकर ने पार्वती से विवाह करके अपने अर्धनारीश्वर अंग में इस के दो भाग कर लिये हैं। एक ताण्डव और दूसरा लास्य। इस में सत्त्व, रजस् और तमस् तीनों गुण दिखलाई पड़ते हैं और अनेक रसों से सम्पन्न मानवों के चरित्र भी दिखलाई पड़ते हैं। अतः भिन्न-भिन्न रुचि वाले लोगों के लिए नाटक ही एक ऐसा उत्सव है, जिस में सबको एक-सा आनन्द मिलता है। कालिदास की इस सदुक्ति से नाट्य की उपयोगिता भी स्पष्ट होती है।

नाट्य की परिभाषा करते हुए आचार्य भरत मुनि कहते हैं कि,

त्रैलोकस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।। [3]

अर्थात् इस सम्पूर्ण तीन लोक के भावों का अनुकरण नाट्य है। इस सिद्धान्त के अनुसार नाट्य साधारणीकरण व्यापार द्वारा साधारणीकृत रूप से सारे संसार के भावों का अनुकीर्तन रूप है।

नाट्यशास्त्र भारतीय शास्त्रपरम्परा का एक परिनिष्ठित अनुमप ग्रन्थरत्न है। इसके रचयिता भरतमुनि माने गये हैं। भरत ने नाट्यकला को शास्त्र का सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप प्रदान किया है। नाट्यशास्त्र के अन्तः प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि, भरतों की एक परम्परा विद्यमान रही है। उसी शाश्वरत परम्परा की साधना का परिणाम नाट्यशास्त्र है।

नाट्यशास्त्र को समग्र भारतीय-कलाओं का कोश कहा जाता है। भरत मुनि का भी यह मन्तव्य है कि, संसार में ऐसा कोई ज्ञान, शिल्प, कला, योग, कर्म नहीं है, जो इस नाट्य में समाहित न हो-

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
नासौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।। [4]

नाट्य में अनुषक्त अभिनय, सङ्गीत, नृत्य, वाद्य, वास्तु, मूर्ति, चित्र, पुस्त आदि विविध कलाओं एवं अनेक प्रकार के शिल्पों का भी परिनिष्ठित एवं व्यापक विवेचन इस ग्रन्थ में हुआ है। इसके साथ ही भरतकृत नाट्यशास्त्र में प्रसङ्गतः नाट्याभिनय एवं नाट्यलेखन के साधनभूत सौन्दर्यशास्त्र, काव्य तथा व्याकरण इन विषयों की भी चर्चा हुई है। भरत ने इसे सार्ववर्णिक पञ्चम वेद कहा है।

2. उद्देश्य

प्रयोजनममुद्दिश्य न मन्दो ऽपि प्रवर्तते अर्थात् विना प्रयोजन के मन्दमति भी किस कार्य में प्रवृत्त नहीं होता, इस न्याय से प्रस्तुत शोधलेख के भी निम्न प्रयोजन विद्यमान हैं–

नाट्य के स्वरूप एवं महत्त्व को बताना।

नाट्यशास्त्र के स्वरूप एवं वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालना।

नाट्य की प्रयोगधर्मीता को प्रकाशित करना।

नाट्यकला के वारीकियों को दर्शाना।

नाट्य की वेदरूपता को स्पष्ट करना।

नाट्य के प्रयोजन को प्रदर्शित करना।

नाट्यशास्त्र की संरचना के प्रयोजन को बताना।

साथ ही नाट्य एवं नाट्यशास्त्र की उपयोगिता को सिद्ध करना।

3. सीमांकन

नाट्योत्पत्ति नामक नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय के आधार पर ही नाट्यशास्त्र का कलेवर प्रतिष्ठित है। आत्रेय प्रमुख मुनियों के द्वारा पूछे गये पांच प्रश्नों के उत्तर में नाट्यशास्त्र की यह व्यापक संरचना बनी है। अतः इस शोधपत्र में नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय के आधार पर ही उस की उपयोगिता की चर्चा केन्द्रित की गई है।

4. पारिभाषीकरण

नाट्य- सुखदुःखमय लोक का स्वभाव/अवस्था ही आंगिक, वाचिक, सात्त्विक एवं आहार्य–चतुर्विध अभिनय से युक्त होकर नाट्य रूप धारण करता है। यह नाट्य समस्त लोकों में आनन्द का जनक है।

नाट्यवेद- ब्रह्मा जी ने ऋग्वेद से कथावस्तु, यजुर्वेद से अभिनय, सामवेद से संगीत एवं अथर्व वेद से रसों का ग्रहण कर पंचम नाट्यवेद की रचना की। ऋग्वेदादि चार वेद के समान यह नाट्यवेद अनादि और अपौरुषेय शाश्वत ज्ञान है।

नाट्यशास्त्र-भारतीय शास्त्रपरम्परा का एक परिनिष्ठित अनुमप ग्रन्थरत्न है। आचार्य भरत मुनि ने नाट्यकला को शास्त्र का सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप प्रदान किया है।

नाट्यस्वरूप- नाना प्रकार के भावों से सम्पन्न, नाना प्रकार की अवस्थाओं वाला तथा लोकव्यवहार का अनुकरण करने वाला नाट्य है। नाट्य में साधारण अनुकरण मात्र न होकर अभिनय की प्रधानता रहती है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नाट्यप्रयोजन-शोक सन्तप्त के लिए धैर्य, रोगपीडितों के लिए मनोविनोद, श्रम से थके हुए के लिए सुख प्रदान करने वाला यह नाट्य होता है।

लोककल्याण- नाट्य हितोपदेश, विश्रान्ति(आराम) देने वाला, कल्याणकारी लोकोपदेश देने वाला होता है।

5. विषयवस्तु विश्लेषण

नाटकान्तं हि कवित्वम् इस सदुक्ति की गरिमा के अनुरूप नाटक या नाट्य की समाज के लिए उपयोगिता पर विचार विमर्श हेतु विषय का अवतरण किया गया है। साथ ही शास्त्र के अनुरूप प्रयोग में परिष्कार, परिमार्जन सम्भव होता है। इस दृष्टि से नाट्यशास्त्र की भी उपयोगिता पर विचार व्यक्त किया गया है। जो निम्न प्रकार है-

5.1 नाट्यशास्त्र का परिचय

प्राचीन ग्रन्थों में नाट्यशास्त्र के दो प्रकार की संहिताओं का उल्लेख प्राप्त होता है- एक द्वादशसाहस्त्रीसंहिता दूसरी षट्साहस्त्रीसंहिता। किन्तु द्वादशसाहस्त्रीसंहिता (बारह हजार श्लोक वाला) आज उपलब्ध नहीं है। इस समय जो नाट्यशास्त्र उपलब्ध है वह षट्साहस्त्रीसंहिता (छह हजार श्लोक वाला) है। यह प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में द्वादशसाहस्त्री नाट्यशास्त्र का एक बृहद् रूप अवश्य विद्यमान था, जिस का संक्षिप्त रूप छह हजार श्लोकों का वर्तमान नाट्यशास्त्र हैं।

इस समय नाट्यशास्त्र के उपलब्ध संस्करणों में अध्याय की संख्या 36 या 37 है। नाट्यशास्त्र के प्राचीन टीकाकार अभिनवगुप्त नाट्यशास्त्र में 36 अध्याय मानते हैं। अपनी अभिनवभारती टीका की प्रस्तावना के द्वितीय श्लोक में"षटत्रिंशक भरतसूत्रम् इदं.......... लिखा है।" 37 अध्याय वाले संस्करण में 36 वें अध्याय के ही कुछ भागों को 37 वें अध्याय के रूप में पृथक् कर दिया गया है। विषय की दृष्टि से 36 और 37 अध्यायों वाले संस्करणों में अन्तर नहीं है।

यह नाट्यशास्त्र ग्रन्थ छन्दोबद्ध है, छन्द प्रायः अनुष्टुप् है। कतिपय स्थल गद्यमय भी है। अभिनव गुप्त ने प्रस्तुत नाट्यशास्त्र को भरतसूत्र भी कहा है। इसमें साथ ही सूत्र, भाष्य, संग्रह, कारिका तथा परिकरश्लोक– ये नाट्यशास्त्र के पाठ में अलग अलग स्तर हैं।

5.2 नाट्यशास्त्र का रचनाकार

भारतीय परम्परा में भरत मुनि ही नाट्यशास्त्र के रचनाकार माने जाते हैं। दशरूपक, नाट्यदर्पण, भावप्रकाशन, रसार्णवसुधाकर, संगीतरत्नाकार आदि परवर्ती ग्रन्थों में भरतमुनि का नाट्यशास्त्र के प्रणेता के रूप में वर्णन किया गया है। नाट्यशास्त्र के रचयिता के रूप में भरतमुनि एक ही व्यक्ति है और उन्होंने नाट्यशास्त्र की रचना की है। यह तथ्य नाट्यशास्त्र में प्राप्त विवरणों से स्पष्ट है। यथा 'भरतं नाट्यकोविदम्'[6], 'मुनीनां भरतो मुनि.........'[7]तथा सर्वज्ञ भरतं ततः[8] इत्यादि।

5.3 नाट्यशास्त्र का रचनाकाल

नाट्यशास्त्र का रचनाकाल पर्याप्त विवादग्रस्त है। इस विषय में पूर्णतया निर्णायक सामग्री का अभाव है। कतिपय उपलब्ध आभ्यन्तर एवं बाह्य साक्ष्यों के आधार पर इसकी पूर्व सीमा और अपर सीमा निर्धारित की जा सकती है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नाट्यशास्त्र का रचनाकाल विक्रम पूर्व पञ्चम शताब्दी से लेकर विक्रमपूर्व प्रथम शताब्दी तक माना जाता है। ठीक रचनाकाल का निश्चय करना तो कठिन है किन्तु यह निश्चित बात है कि, उसकी रचना विक्रम संवत्सर के आरम्भ होने के पूर्व ही हो चुकी थी।

नाट्यशास्त्र की रचना ई. पू. पञ्चम शताब्दी में प्रारम्भ हो चुकी थी। नाट्यशास्त्र की सूत्रशैली भी इसको पुष्ट करती है। नाट्यशास्त्र का वर्तमान स्वरूप प्रथम शताब्दी में हुआ होगा। अतः नाट्यशास्त्र का रचना काल ई. पू. पञ्चम शताब्दी से लेकर ई. प्रथम शताब्दी के मध्य माना जा सकता है। सामान्यतः नाट्यशास्त्र का रचनाकाल ई.पू. द्वितीय शताब्दी मानना अधिक न्यायसंगत है।

5.4 नाट्यशास्त्र की शैली

नाट्यशास्त्र में प्रायः सरल संस्कृत भाषा का ही प्रयोग मिलता है। यद्यपि इस ग्रन्थ को नाट्यवेद कहा गया है, तथापि इसकी भाषा वैदिक नहीं है। वाल्मीकि रामायण की भाषा की भाँति इसकी भाषा सरलता से समझ में आती है।सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र गद्य और पद्य दोनों प्रकार की शैलियों में लिखा गया है। नाट्यशास्त्र में सूत्र, भाष्य एवं निरुक्ति-तीन शैलियों के गद्य मिलते हैं। पद्य अधिकांशतः अनुष्टुप् छन्द में है। बहुत थोड़े से पद्य आर्या एवं उपजाति छन्दों में हैं। नाट्यशास्त्र मूलतः सूत्रशैली में लिखा गया था, बाद में कारिका के रूप में विकसित हुआ, यह अभिनवगुप्त आदि आचार्यों की मान्यता है। नाट्यशास्त्र की गद्यशैली के मुख्यतः तीन रूप मिलते हैं- सूत्र, भाष्य एवं निरुक्त। अभिनव ने नाट्यशास्त्र का भरतसूत्र के रूप में निर्देश किया है।

और यह भी ज्ञात होता है कि, आनुवंश्यश्लोक, सुत्रानुविद्ध आर्याएँ तथा आर्याएँ भरतमुनि द्वारा रचित नहीं है, अपितु पूर्वपरम्परा से गृहीत है। भरत ने पूर्वाचार्यों के मतों को अपने मत के समर्थन में उद्धृत किया है। कहीं कहीं मतभेद भी प्रदर्शित किया है। इस प्रकार भरत ने नाट्यशास्त्र को एक सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित रूप प्रदान किया है।

5.5 नाट्यशास्त्र का महत्त्व

नाट्यशास्त्र से भारत की विकसित एवं समुन्नत नाट्यकला का परिचय मिलता है। नाट्य में सम्बन्धित अनेकानेक विषयों का जितना विशद एवं सूक्ष्म विवेचन नाट्यशास्त्र में मिलता है, उतना सम्भवतः विश्व के किसी भी नाट्यशास्त्र में नहीं मिलता। प्रतीत यही होता है कि नाट्यकला में भारत ही विश्व की अग्रणी रहा है।

नाट्यशास्त्र का विषय-विवरण से स्पष्ट है कि, तत्कालीन भारतीय समाज केवल धनधान्य से ही समृद्ध न था अपितु विद्या और विशेष रूप से वास्तु, शिल्प, मूर्ति, चित्र, संगीत, नाट्य, नृत्य, एवं काव्य आदि कलाओं में भी पारंगत था। नाट्यशास्त्र नृत्य एवं संगीतशास्त्र का अत्यन्त ही विशद वर्णन प्रस्तुत करता है। उसमें एक ओर जहाँ आंगिक अभिनय के प्रकरण में एक-एक अँगुली एवं आँख की बरौनियों तक अभिनय-प्रकार का सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरूपण हुआ है, वहीं दूसरी ओर वाचिक अभिनय के प्रकरण में अक्षर एवं उनकी मात्राओं तक के उच्चारण का विधान है। सात्त्विक एवं आहार्य अभिनय के

प्रकरणों में मूर्च्छादि भावों एवं वेशभूषादि उपकरणों तथा उसके अभिनय प्रकारों का जो विवेचन किया गया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। यही कारण है कि पाश्चात्य एवं पौरस्त्य सभी विद्वानों ने नाट्यशास्त्र का महत्त्व स्वीकार किया है।

नाट्यशास्त्र एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें दृश्य एवं श्रव्य उभयविध काव्य का सर्वांगीण विवेचन हुआ है। उनके रस, अलंकार, गुण, रीति एवं अभिनय आदि तत्त्वों का निरूपण एवं उनकी व्याख्या नाट्यशास्त्र में उपलब्ध है। इस प्रकार नाट्यशास्त्र संस्कृतकाव्य के आलोचनाशास्त्र (जिसे बाद में अलंकार शास्त्र के नाम से अभिहित किया गया) का आदि एवं उपजीव्य ग्रन्थ है।

परवर्ती के भामह, दण्डी एवं वामन आदि आचार्यों ने नाट्यशास्त्र से ही कुछ तत्त्वों को लेकर उनका अलंकारशास्त्र के रूप में अलग-अलग विवेचन किया। इस प्रकार दृश्यकाव्य नाट्य से श्रव्यकाव्य प्रबन्ध या महाकाव्य का पृथक् विवेचन हुआ है। नाट्यशास्त्र में नाट्य का प्रधान एवं काव्य का गौण रूप से विवेचन इस तथ्य को व्यक्त करता है कि, ईसा पूर्व की शताब्दियों में नाट्य का प्रचलन महाकाव्य की अपेक्षा अधिक था।

नाट्यशास्त्र के विषय में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, संस्कृत अलंकारशास्त्र को 'रस' नामक तत्त्व, जो बाद में काव्य की आत्मा माना गया, नाट्यशास्त्र की ही देन है। **विभावानुंभावव्यभिचारिसंयोगाद् रसनिष्पत्तिः**[9]।यह भरतसूत्र ही बहुधा व्याकृत होकर काव्य में अभिव्यञ्जना के सिद्धान्त का आश्रय बनता है। काव्यशास्त्र का चरमोत्कर्ष ध्वनिसिद्धान्त की उद्भावना हुई है जिसका सर्वस्व रस ही है।

मानव मनोविज्ञान के अध्ययन की दृष्टि से भी नाट्यशास्त्र अपना विशेष महत्त्व रखता है। धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त आदि नायक एवं मुग्धा, स्वीया आदि नायिकाओं, उनकी नाना अवस्थाओं तथा लक्षणों का नाट्यशास्त्र बड़ा ही विस्तृत एवं वैज्ञानिक विवरण प्रस्तुत करता है। जहाँ पुरुष एवं स्त्री के व्यक्तित्व ही पहचान के लक्षणों का उपन्यास बड़ी बारीकी से किया गया है। किस तरह के व्यक्ति को क्या पसन्द है, कौन व्यक्ति कैसी बातों से अनुकूल एवं प्रतिकूल होता है, ये सभी बातें भी नाट्यशास्त्र में भरी पड़ी हैं। इसीलिये यदि इसे विविध विद्याओं, कलाओं एवं मानव-मनोविज्ञान का एनसाइक्लोपीडिया (बृहत्कोश) कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी।

नाट्यशास्त्र की यही एक विशेषता नहीं है कि, वह नाट्यकार, अभिनेता तथा सामाजिक इन सभी के लिए उपयोगी विषयों का वर्णन करता है। इन तीनों में भी प्रमुखता अभिनेताओं के उपयोगी विषयों को दी गई है। उदाहरणार्थ विभिन्न प्रकार के अभिनयों, पूर्वरंग तथा नृत्यगीतादि का वर्णन यहाँ अभिनेता को ही दृष्टि में रखकर किया गया है। यह नाट्यशास्त्र में प्रायोगिक दृष्टिकोण का परिचायक है।

इस प्रकार नाट्यशास्त्र हमारी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति का परिचय देते हुए अपनी उन विशद ज्ञानसामग्री को हमारे सामने उपस्थित करता है। नाट्यशास्त्र में उसके पूर्व बिखरे हुए नाट्य-सिद्धान्तों आदि के सर्वथा योजन करने का तो सफल प्रयास किया ही गया है, साथ ही उसमें समाज की दृष्टि से हीन समझने जाने वाले नटों तथा अभिनेताओं आदि को

प्रतिष्ठित स्थान दिलाने का भी प्रयास किया गया है। इस प्रकार उसके द्वारा नाट्यकला का समुन्नयन तथा प्रतिष्ठान तो हुआ ही है साथ ही कुछ गलत ढंग की सामाजिक रूढ़ियों को दर करने का भी सफल प्रयास हुआ है। इस प्रकार नाट्यशास्त्र भारत के उन महाग्रन्थों में से एक है, जिन्होंने संसार में भारत के गौरव को बढ़ाया है।

5.6 नाट्यशास्त्र का विषय

भरतमुनि द्वारा रचित 'नाट्यशास्त्र' एक प्रसिद्ध एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसके अन्तर्गत नाट्य की रचना तथा प्रयोग से सम्बन्धित अनेक विषयों का विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है। सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र के 36/37 अध्यायों में नाट्य की उत्पत्ति, लक्षण, प्रेक्षागृह, नृत्य के विविध अंग, चतुर्विध अभिनय, रस, भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भावादि, नायक-नायिकाओं के भेदोपभेद, संगीत, वाद्य, छन्दः, गुण, रीति, अलंकार आदि विषयों का विशेष विवेचन हुआ है। नाट्यशास्त्र कलाविषयक विश्वकोश है।

प्रथम अध्याय में नाट्य की उत्पत्ति के साथ उसकी परिभाषा की गई जो बहुत व्यापक है। इसमें प्रश्नकर्ता के रूप में ऋषियों के पाँच प्रश्न के उत्तर से ही सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र का विग्रह बना हुआ है। प्रथम अध्याय में वर्णित विषयों का परिचय इस प्रकार है।

5.7 प्रथम अध्याय का विषय-विवेचन

नाट्य की प्रजोयनीयता को समझने के लिए नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय के प्रतिपाद्य को जानना आवश्यक है। प्रतिपाद्य इस प्रकार है –

ब्रह्मा एवं शिव दोनों देवताओं को प्रणाम कर भरतमुनि नाट्यशास्त्र का प्रवचन करते हैं। आत्रेय आदि मुनियों ने भरत को पाँच प्रश्न[10] पूछे-

1. कथम् उत्पन्नः ? 2. कस्य कृते ? 3. कत्यङ्गः ? 4. किं प्रमाणः ? 5. अस्य कीदृशः प्रयोगः ?

अर्थात् नाट्यवेद किस प्रकार उत्पन्न हुआ ? किस के लिए उत्पन्न हुआ ? उसके कितने अङ्ग है ? उसका क्या प्रमाण है ? और उसका प्रयोग किस प्रकार होता है ? इस प्रश्न-पञ्चक के अनुरूप ग्रन्थ के स्वरूप का अनुमान किया जा सकता है। इसके उत्तर में ही इस नाट्यशास्त्र का प्रवचन हुआ है।

कृतयुग की समाप्ति तथा त्रेतायुग के आरम्भ में लोग ईर्ष्या, क्रोध, काम, लोभ तथा सुखदुःखादि से अभिभूत हो गये। उस समय इन्द्र-प्रमुख देवताओं ने ब्रह्माजी के पास जाकर निवेदन किया कि-

क्रीडनीयकमिच्छामो दृश्यं श्रव्यं च यद् चेत्।[11]

अर्थात् हम लोग एक ऐसा क्रीडनीयक अर्थात् मनोरञ्जन का साधन चाहते हैं, जो देखा भी जा सके और सुना भी। इस निवेदन को सुनकर ब्रह्मा ने समाधि लगाकर यह संकल्प किया।

धर्म्यमर्थ्यं यशस्यं च सोपदेश्यं ससङ्ग्रहम्।

भविष्यतश्च लोकस्य सर्वकर्मानुदर्शनम्।।

सर्वशास्त्रार्थसम्पन्नं सर्वशिल्पप्रवर्तकम्।

नाट्याख्यं पञ्चमं वेदं सेतिहासं करोम्यहम्।। [12]

अर्थात् मैं धर्म, अर्थ तथा यश को प्राप्त कराने वाले, शास्त्रों के उपदेश एवं ज्ञान संग्रह से युक्त, समस्त कार्यों में भावी लोक का मार्गदर्शन करने वाले, समस्त शास्त्रों के अर्थ को व्यक्त करने वाले तथा समस्त शिल्पों को संरक्षण देने वाले नाट्य नामक पञ्चम वेद की इतिहास-सहित रचना कर रहा हूँ। इसके उपरान्त नाट्यशास्त्र में कहा गया है कि-

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।

यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।। [13]

अर्थात् ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य , सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस ग्रहण किया।

इस प्रकार ब्रह्मा ने वेदोपवेदों पर आधारित इस नाट्यरूप पञ्चम वेद की रचना की जो समस्त वर्णों अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों सभी के लिए था। नाट्यरचना के अनन्तर ब्रह्मा ने इन्द्र से कहा कि मैंने इतिहास अर्थात् दशरूपकों की सृष्टि कर दी है। अब आप इसे कुशल देवताओं द्वारा प्रयुक्त करवाएँ। इस पर इन्द्र ने ब्रह्मा से कहा कि देवता तो नाट्यकर्म करने में असमर्थ हैं। नाट्यप्रयोग का कार्य ऋषियों को देना चाहिए। इस पर ब्रह्मा ने भरत मुनि से कहा कि आप पुत्रों समेत इसका प्रयोग करें।

इस आदेश के अनुसार भरत मुनि ने अपने सौ पुत्रों को नाट्यशिक्षा प्रदान की। इसके अनन्तर भरतमुनि ने भारती, सात्त्वती तथा आरभटी इन वृत्तियों पर आश्रित अभिनय किया। इस पर ब्रह्मा ने उनसे कैशिकी वृत्ति का भी संयोग करने को कहा। इस पर जब भरतमुनि ने यह कहा कि कैशिकी वृत्ति का अभिनय स्त्रीपात्रों के विना असम्भव है, तो ब्रह्मा ने अप्सराओं की सृष्टि करके उन्हें (भरत को) प्रदान किया। जब नाट्य-सम्बन्धी समस्त उपकरण प्रस्तुत हो गये, तब ब्रह्मा जी ने भरत मुनि से कहा कि आगे इन्द्र का ध्वजमहोत्सव शीघ्र ही आने वाला है। उसी में इस नाट्यसंज्ञक वेद का प्रयोग करो।

इस आदेश के अनुसार भरतमुनि ने नान्दी-पाठ के अनन्तर देवासुर संग्राम में होने वाली देवताओं की विजय का अभिनय आरम्भ किया। इस पर देवता तो हर्षित हुए, परन्तु दैत्य रुष्ट हो गए। वे अभिनय में विघ्न करने लगे। ब्रह्मा ने उन्हें समझाने की चेष्टा की, परन्तु जब वे नहीं शान्त हुए, तो नाट्यगृह की आवश्यकता का अनुभव किया गया। विश्वकर्मा द्वारा नाट्यगृह का निर्माण हो जाने पर विधिवत् रंगपूजन एवं रंगरक्षक देवताओं की नियुक्ति की गई। इस प्रकार नाट्योत्पत्ति नामक प्रथम अध्याय की समाप्ति हो जाती है।

इसके अन्तर्गत नाट्य की रचना, प्रयोग तथा उपयोगिता से सम्बन्धित अनेक विषयों पर विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है। नाट्य सम्बन्धी विवेचन के साथ-साथ रस, अलंकार, छन्द, भाषा, नृत्य, गीत, वाद्य तथा अन्य अनेक विषयों का वर्णन होने से यह एक आकर ग्रन्थ बन गया है। नाट्यशास्त्र एवं रसशास्त्र के प्रायः समस्त परवर्ती ग्रन्थों का तो यह उपजीव्य ही रहा है।

5.8 नाट्य की परिभाषा

'नाट्यशास्त्र'में लोगों के किए हुए कार्यों के अनुकरण को ही समान्य रूप से नाट्य कहा गया है। इसके प्रथम अध्याय में नाट्य की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि-

देवानामसुराणाञ्च राज्ञां लोकस्य चैव हि।
कृतानुकरणं लोके नाट्यमित्यभिधीयते।। [14]

अर्थात् देवताओं, असुरों, राजाओं, तथा शेष जनता द्वारा किए गुए कार्यों का अनुकरण ही नाट्य कहा जाता है। नाट्यशास्त्र में उल्लिखित अमृतमन्थन नामक समवकार के प्रयोग के प्रसंग में कहा गया है कि-

तदन्तेऽनुकृतिर्बद्धा यथा दैत्याः सुरैर्जिताः।[15]

अर्थात् देवों द्वारा दैत्यों पर विजय पाने का अनुकरण किया गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि यहाँ नाट्य के लिए सामान्यतः अनुकरण शब्द का प्रयोग किया गया है।

नाट्यशास्त्र में ही नाट्य-परिभाषाओं एवं नाट्याङ्गों के विवेचन से ज्ञात होता है कि वह साधारण अनुकृति मात्र को नाट्य नहीं मानता वरन् उस अनुकृति में कुल वैशिष्ट्य की भी आवश्यकता का अनुभव करता है। उसमें प्रथम अध्याय में ही नाट्य की परिभाषा देते है कि-

योऽयं स्वभावो लोकस्य सुखदुःखसमन्वितः।
सोऽङ्गाद्यभिनयोपेतो नाट्यमित्यभिधीयते।। [16]

अर्थात् लोक का सुखदुःखात्मक स्वभाव जब चतुर्विध अभिनयों द्वारा अभिनीत किया जाता है, तो उसे नाट्य कहते हैं। यहाँ अनुकरण के साधन पर अभिनय शब्द का प्रयोग किया गया है। इससे स्पष्ट है कि नाट्य में साधारण अनुकरण मात्र न होकर अभिनय की प्रधानता रहती है।

5.9 नाट्य की उपयोगिता

नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में ही प्रथम नाट्य देवासुर संग्राम के अभिनय में अपनी हार का प्रदर्शन देखकर दैत्य लोग ब्रह्मा से कहते हैं कि आपके द्वारा उत्पन्न किए गए इस नाट्य का प्रयोजन तो देवताओं की प्रशंसा तथा हमारा अपमान प्रतीत होता है। इस पर ब्रह्मा उन्हें समझाते हुए कहते हैं कि, ऐसी बात नहीं है। नाट्य में तो देवता-दानव सभी के शुभ-अशुभ कर्मों तथा भावों का अनुकीर्तन लोकोपदेश की दृष्टि से किया गया है। नाट्य के प्रयोजन को समझाते हुए ब्रह्मा जी कहते हैं-

क्वचिद् धर्मः क्वचित्क्रीडा क्वचिद्-वधः क्वचिच्छमः।
क्वचिद्धास्यं क्वचिद्युद्धं क्वचित्कामः क्वचिद्वधः।।
धर्मो धर्मप्रवृत्तानां कामः कामोपसेविनाम् ।
निग्रहो दुर्विनीतानां विनीतानां दमक्रिया ।।
क्लीबानां धार्ष्ट्यजननमुत्साहः शूरमानिमाम् ।

अबुधानां विबोधश्च वैदुष्यं विदुषामपि ॥
ईश्वराणां विलासश्च स्थैर्यं दुःखार्दितस्य च।
अर्थोपजीविनामर्थो धृतिरुद्विग्नचेतसाम् ॥
नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम्।
लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्॥
उत्तमाधममध्यानां नराणां कर्मसंश्रयम्।
हितोपदेशजननं धृतिक्रडासुखादिकृत्॥
दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रान्तिजननं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति॥
धर्म्यं यशस्यमायुष्यं हितं बुद्धिविवर्धनम्।
लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति॥[17]

अर्थात् -(इस नाट्य में) कहीं धर्म , कहीं क्रीडा, कहीं अर्थ, कहीं शान्ति (शान,) कहीं युद्ध, कहीं युद्ध, कहीं काम और कहीं वध (का दृश्य का वर्णन हैं)।(नाट्य में) धर्म परायणों का धर्म, काम का सेवन करने वालों का काम, दुष्टों को दण्ड व्यवस्था का (दुष्टों का वध) विनीतों का इन्द्रिय-दमन-क्रिया का (वर्णन पाया जाता है।) (यह नाट्य) नपुंसकों में धृष्टता कों उत्पन्न करने वाला, अपने को शूर मारने वालों में उत्साह-वृद्धि करने वाला, अविद्वानों के लिये ज्ञानप्रद एवं विद्वानों को भी वैदुष्य देने वाला (होता है)।धनियों के लिये विलास-जनक, दुःख-पीडितों के लिये निश्चयात्मक उत्साह, स्थिरता देने वाला, अर्थ का उपार्जन करने वालो के लिये अर्थ (धन का प्रदान करने वाला) तथा उद्विग्न चित्त वालों के लिये धैर्य प्रदान करने वाला (यह नाट्य है)।नाना प्रकार के भावों से सम्पन्न, नाना प्रकार की अवस्थाओं वाला तथा लोक-व्यवहार का अनुकरण करने वाला यह नाट्य मैंने बनाया है।उत्तम, अधम तथा मध्यम श्रेणी के मुनष्यों के कर्म पर आश्रित, हितोपदेश देने वालाएवं ध्यैर्य, मनोरंजन सुखादि को करने वाला - (यह नाट्य मैंने बनाया/ यह नाट्य होगा)।यह नाट्य दुःखों से पीड़ितो के लिये , थके हुये लोगों के लिये , शोक से सन्तप्त के लिये , तपस्वियों के लिये विश्रान्ति देने वाला होगा। अर्थात् रोगादि से उत्पन्न दुःख, मार्ग चलने आदि की थकान एवं बन्धुमरणदि शोक से आने - पीड़ितों से अत्यन्त दुर्बल तपस्वियों के लिये यह नाट्य विश्रान्ति/आराम देने वाला होगा।यह नाट्य धर्म का जनक , यश को प्रदान करने वाला , आयु को बढ़ाने वाला , कल्याणकारी, बुद्धि को बढ़ाने वाला एवं लोक को उपदेश देने वाला होगा।

5.10 नाट्य-प्रयोजन विमर्श

भाव, अवस्था एवं लोक व्यवहार से युक्त नाट्य का स्वरूप भी होता है।शोक सन्तप्त के लिये ध्यैर्य , रोगपीडितों के लिये मनोविनोद, श्रम से थके हुये के लिये सुख प्रदान करने वाला यह नाट्य होता है।वर्तमान काल में दुःखार्तादि के लिये , नाट्य विश्रान्तिजनक होगा, एवं कालान्तर में जिससे सुख प्राप्त हो सके- इस प्रकार का उपदेश करता है। दुःख का नाश, सुख

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 4, April - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

का वितरण और कालान्तर में सुख की प्राप्ति नाट्य के प्रयोजन हैं।जो दुःखी नहीं है , अपितु अत्यन्त सुखी हैं उन सुखियों के लिये लोक व्यवहार और धर्मादि के उपायवर्ग का उपदेश देनेवाला यह नाट्य होगा।

अन्ततः यहाँ नाट्य को विभिन्न प्रकार के लोगों के लिए विभिन्न प्रकार से मनोरञ्जन, शिक्षण तथा आनन्द प्रदान करने वाला कहा गया है। इस प्रकार लोकशिक्षण, लोकरञ्जन तथा लोकानन्द आदि को नाट्य का प्रयोजन कहा जा सकता है।

5.11 नाट्यशास्त्र की उपयोगिता

नाट्योत्पत्ति की कथा में कहा गया है कि त्रैतायुग में रजस् गुण की प्रधानता के कारण मानव समाज उस सत्य मार्ग से विचलित हो रहा था, जिसको वेदों ने निर्धारित किया था। मनुष्यों को धर्म के सत्यमार्ग पर वेदों की सहायता से चलना असंभव हो गया था। क्योंकि शूद्रवर्ण के लिए वेदाध्ययन निषिद्ध था। अतः देवतागण एक ऐसे साधन 'क्रीडनीयक' क्रीडावस्तु को चाहते थे जिससे वर्ण निरपेक्ष होकर सम्पूर्ण मानव समाज को एक साथ शिक्षा दी जा सके। वे वेदों की आदेशात्मक शिक्षा से भिन्न कोई ऐसी शिक्षा प्रणाली चाहते थे, जो आनन्दपूर्ण हो, जो आदेश की कटुता से रहित हो।

इस दृष्टि से नाट्य कला को नितान्त उपयोगी समझा गया। क्योंकि नाट्य कला का प्रयोजन आँखों और कानों को सुखद लगने वाले प्रदर्शन के साधन से प्रत्यक्ष (ज्ञात) रूप से नहीं अपितु परोक्ष (अज्ञात) रूप से शिक्षा-बोध देना है। नाट्य कला ज्ञात रूप में वेदों जैसा कोई आदेश नहीं देती, अपितु दर्शकों का चरित्र नायक से तादात्म्य स्थापित करते हुए शिक्षा (बोधरूपी) औषधी को सम्मुख कर देती है, केवल इतना ही नहीं उस औषधि की कटुता को दूर करने के लिए या तो अभिराम दृश्य और कर्णसुखद मधुर स्व रूपी शक्कर की चाशनी उस पर चढ़ा देती है, जिससे शिक्षारूपी औषधि की कटुता का अनुभव नहीं होता। इस प्रकार नाट्यकला के प्रदर्शन का प्रयोजन दर्शकों को शिक्षा देते हुए उनका चारित्रिक उत्थान करना है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि भरत के मन में नाट्य का उद्देश्य बोध और मोद है। ये दोनों प्रयोजन- बोध (ज्ञानार्जन) और मोद (आनन्द) आपाततः पृथक् दिखाई देने वाले तत्त्वरूप से अन्तः में एक ही है। क्योंकि बोध (ज्ञानार्जन) भी अन्ततः साध्य न होकर आनन्द (मोद) का साधन ही तो है।

इस प्रकार यह निर्भान्त रूप से स्पष्ट हो जाता है कि नाट्य (काव्य) का चरम उद्देश्य आनन्द ही है, क्योंकि बोध (ज्ञानार्जन) चारित्रिक उत्थान आदि स्वयं अपनी सिद्धि नहीं है, उन सबका उद्देश्य भी आनन्द ही है।

6. उपसंहार

नाट्य-क्रिया एक कला है और नाट्यशास्त्र एक कला का शास्त्र है। कला नाट्याभिनय को सर्वाङ्ग सुन्दर ब नाने में सहयोग देती है। वस्तुतः नाट्यकला रस के उन्मीलन की प्रधान सहायिका है। इसके अभाव में नाट्य अथवा काव्य अपनी यथार्थता सिद्ध नहीं कर सकता। कला शून्य अभिनय में शब्दांकित नाट्य वस्तु केवल वार्ता मात्र रह जाती है। या यों कहिए कि रसोद्रेकशक्ति के अभाव में वह अकाव्य होने से त्याज्य होती है। इसीलिए आचार्य भामह ने ऐसी वार्ता मात्र को अकाव्य माना है। वे कहते हैं-

गतोऽस्तमर्को भातीन्दुः यान्ति वासाय पक्षिणः।
इत्येवमादि किं काव्यं ? वार्तामेनां प्रचक्षते।।[18]

अर्थात्- सूर्य अस्त हो गया, चन्द्रमा का उदय हो गया है, पक्षिगण अपने –अपने नीड़ों को लौट रहे हैं....इत्यादि – यह क्या कोई काव्य है ? इसको वार्ता कहते हैं। आनन्दवर्धन आदि ने इसे इतिवृत्त-वर्णन कहा है और अकाव्योचित् माना है। **'न हि कवेः इतिवृत्तमात्रनिर्वहेण किंचित् प्रयोजनम्।** '[19]नाट्य का विषय (वस्तु-तत्त्व) कुछ भी हो, जब तक वह विषय चारों अभिनयों (आंगिक, वाचिक, सात्त्विक और आहार्य) और गान से युक्त नहीं होगा, जब तक उसमें सरसता का सन्निवेश न हो सकने के कारण से नाट्य की संज्ञा प्राप्त नहीं हो सकेगी[20]

'काव्येषु नाटकं रम्यम्' की विजय घोष की ध्वनि भारतीय काव्यशास्त्र में निरंतर गूंजती रही। इसका कारण स्पष्ट था। हमारे यहाँ काव्य की आत्मा रस माना गयी है और इस रस का मूल -सम्बन्ध नाटक से ही सदा रहा है क्योंकि विभाव, अनुभाव की जितनी प्रत्यक्ष प्रस्तुति नाटक में संभव है, उतनी काव्य के अन्य विधाओं-श्रव्य काव्य आदि में नहीं हो सकती। अतः रस के सम्बन्ध से नाटक की अन्य काव्य विधाओं में श्रेष्ठता भारत में अन्त तक अक्षुण्ण रही। इसीलिए वह कवित्व की चरम सीमा माना जाता है- 'नाटकान्तं कवित्वम्।'

नाट्य चरित्रोत्थान का एक अमोघ साधन है। मूर्त और प्रत्यक्ष दृश्य जितना बुद्धिगम्य होकर हृदय को प्रभावित करता है, उतना अमूर्त या अप्रत्यक्ष नहीं। यहाँ हमारा तात्पर्य कवि की रचना से उद्भूत होने वाले उस अप्रत्यक्ष कान्तासम्मित उपदेश से है जो रंगमंच पर घटित होने वाली घटनाओं से दर्शकगण प्राप्त कर जीवन में –'राम' आदि के समान आचरण करना चाहिए, रावण आदि से समान नहीं- अपनी पाशविक वृत्ति का त्याग करने में सफल होते हैं। वस्तुतः काव्य के विविध प्रयोजनों में कर्तव्याकर्तव्य का उपदेश करना भी एक मुख्य प्रयोजन है।

रंगमंच पर प्रत्यक्ष रूप से घटती हुई घटनाओं को प्रदर्शित करने वाले नाट्य-काव्य की शैली रसाप्लुत होने से वाङ्मय की अन्य शैलियों से विलक्षण होती है। इस विलक्षणता का उत्पादन करने के लिए नाट्यकार वेद-पुराणादि की प्रभुसम्मित और सुहृत् सम्मित शैलियों का त्याग कर कान्तासम्मित उपदेश शैली को ग्रहण करता है।

वस्तुतः काव्य तथा जीवन में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। क्रान्तदर्शी कवि अपने सामने प्रस्तुत जीवन की विभिन्न स्थितियों का अपनी सूक्ष्मेक्षिका से निरीक्षण कर उन्हें अपने काव्य में चित्रित करती है। कवि आदर्शवाद का पक्षपात होता है। वह किसी वस्तु के हेय पक्ष को ग्रहण न कर ग्राह्य को ही ग्रहण करता है। दर्शक अपने जीवन को उदात्त बनाने के लिए हितोक्ति को स्वीकार करता है। संकेत देता है कि- कवि सुन्दर-मंगल को ही अपनी वाणी में प्रश्रय देता है। वह सत्य की अपेक्षा हित का प्रतिनिधि होता है। कहा गया है-'सत्यस्य वचनं श्रेयः, सत्यादपि हितं वदेत्।' इति

0-0-0

सन्दर्भ एवं पादटिप्पणी

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, पृ. 498
2. मालविकाग्निमित्र, 1.4
3. नाट्यशास्त्र, 1.107
4. वही,1.116
5. नाट्यशास्त्र, भूमिका पृ. 5
6.नाट्यशास्त्र 1.6
7.वही, 1.6
8. वही, 36.9
9. वही, 6. 31, गद्य(सूत्र)
10. वही, 1.4-5
11.वही,1.11
12. वही, 1.14-15
13.वही, 1.17
14.वही, 1.120
15.वही, 1.57
16. वही,1.116
17.वही,1.108-115
18. काव्यालंकार,2.86
19. ध्वन्यालोक, 3.14
20.अभि. भारती, पृ. 428

0-0-0